Volume 2; Issue 2
April to Jun 2026

E-ISSN: 3049-1134

International Journal of Political Studies

Quarterly International Research Journal

International Journal of Political Studies
E-ISSN: 3049-1134
https://www.polsci.in
Volume 2; Issue 2; April-Jun 2026; Page No. 49-63
Peer Reviewed, Indexed and Refereed Journal

वैश्विक नारीवादी परिप्रेक्ष्य में पंडिता रमाबाईः अमेरिकी, यूरोपीय एवं ग्लोबल साउथ के नारीवादी विमर्शों का तुलनात्मक अध्ययन

प्रीति परमार

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग,

दयानंद वैदिक महाविद्यालय उरई, जालौन, उ. प्र.

डॉ. नमो नारायण

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग,

दयानन्द वैदिक कॉलेज, उरई, जालौन, उ. प्र.

सारांश

यह शोध–पत्र पंडिता रमाबाई के नारीवादी चिंतन का अमेरिकी, यूरोपीय एवं ग्लोबल साउथ के नारीवादी विमर्शों के तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि पंडिता रमाबाई का वैचारिक योगदान भारतीय सामाजिक सुधार आंदोलन तक सीमित न होकर वैश्विक नारीवादी चिंतन की बहुकेंद्रीय परंपरा का एक महत्वपूर्ण अंग है। शोध गुणात्मक, वर्णनात्मक–विश्लेषणात्मक तथा तुलनात्मक पद्धति पर आधारित है। शोध में एलिजाबेथ कैडी स्टैंटन, सुसान बी. एंथनी, सोजर्नर ट्रुथ, मैरी वॉल्स्टनक्राफ्ट, एमेलीन पैंकहर्स्ट, सिमोन द बोउवार, च्यू जिन, हुडा शा–रावी और फुनमिलायो रैनसम–कुटी के विचारों की तुलनात्मक समीक्षा करते हुए पंडिता रमाबाई के चिंतन की वैश्विक प्रासंगिकता का मूल्यांकन किया गया है। साथ ही, ताराबाई शिंदे, सावित्रीबाई फुले और बेगम रुकैया जैसे भारतीय समकालीन चिंतकों के संदर्भ में उनके वैचारिक योगदान का पुनर्मूल्यांकन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि पंडिता रमाबाई ने महिलाओं की अधीनता को केवल लैंगिक असमानता के रूप में नहीं, बल्कि जाति, धर्म, शिक्षा, सामाजिक पदानुक्रम और औपनिवेशिक सत्ता के अंतर्संबंधों के परिणामस्वरूप समझा। इस प्रकार उनका चिंतन आधुनिक अंतर्वर्गीय, उत्तर–औपनिवेशिक एवं ट्रांसनेशनल

नारीवादी सिद्धांतों का एक प्रारंभिक वैचारिक आधार प्रस्तुत करता है। शोध प्रतिपादित करता है कि वैश्विक नारीवादी इतिहास के पुनर्लेखन में पंडिता रमाबाई को केवल भारतीय समाज सुधारक के रूप में नहीं, बल्कि वैश्विक नारीवादी परंपरा की एक महत्वपूर्ण बौद्धिक हस्ती के रूप में पुनर्स्थापित किया जाना चाहिए।

कुंजी शब्दः पंडिता रमाबाई वैश्विक नारीवाद, तुलनात्मक नारीवादी अध्ययन, अंतर्विभाजकताय ट्रांसनेशनल नारीवाद, उत्तर–औपनिवेशिक नारीवाद, ग्लोबल साउथ।

---

1. प्रस्तावना

उन्नीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध विश्व स्तर पर सामाजिक, राजनीतिक और बौद्धिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण काल था, जिसने महिलाओं की स्थिति, अधिकारों और सामाजिक भूमिका को लेकर नए विमर्शों को जन्म दिया। यूरोप और संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रथम चरण के नारीवादी आंदोलन महिलाओं के मताधिकार, शिक्षा, संपत्ति के अधिकार तथा सार्वजनिक जीवन में समान भागीदारी की मांग पर केंद्रित थे (Wollstonecraft, 1792; Stanton, Anthony-Gage, 1881)। इसके विपरीत, एशिया और अन्य उपनिवेशित समाजों में स्त्री प्रश्न केवल लैंगिक असमानता तक सीमित नहीं था, बल्कि वह जाति, धर्म, औपनिवेशिक शासन, सामाजिक परंपराओं और सांस्कृतिक वर्चस्व जैसी बहुआयामी संरचनाओं से जुड़ा हुआ था। इसी ऐतिहासिक संदर्भ में पंडिता रमाबाई (1858–1922) का नारीवादी चिंतन भारतीय तथा वैश्विक स्त्री–विमर्श के बीच एक महत्वपूर्ण सेतु के रूप में उभरता है।

पंडिता रमाबाई भारतीय सामाजिक सुधार आंदोलन की ऐसी अग्रणी चिंतक थीं, जिन्होंने महिलाओं की शिक्षा, विधवा पुनर्वास और सामाजिक न्याय के प्रश्नों को केवल सुधारवादी दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि सत्ता–संरचनाओं की आलोचनात्मक समीक्षा के माध्यम से प्रस्तुत किया। उनकी प्रसिद्ध कृति The High-Caste Hindu Woman (1887) उच्चवर्णीय हिन्दू महिलाओं की दयनीय स्थिति का ऐतिहासिक और समाजशास्त्रीय विश्लेषण करते हुए यह प्रतिपादित करती है कि भारतीय स्त्रियों का उत्पीड़न केवल पितृसत्ता का परिणाम नहीं, बल्कि जाति, धर्म और सामाजिक संस्थाओं के परस्पर अंतर्संबंधों से निर्मित है (Ramabai, 1887)। इस प्रकार रमाबाई का चिंतन आधुनिक अंतर्वर्गीय (Intersectional) नारीवादी दृष्टिकोण का पूर्वाभास कराता है। समकालीन नारीवादी सिद्धांतों में किम्बर्ले क्रेंशॉ (1989) द्वारा प्रतिपादित 'इंटरसेक्शनैलिटी' तथा चंद्रा तलपड़े मोहंती (1988; 2003) द्वारा विकसित 'ट्रांसनेशनल

फेमिनिज्म' इस बात पर बल देते हैं कि महिलाओं के अनुभवों को किसी एक सार्वभौमिक ढाँचे में नहीं समझा जा सकता, बल्कि उन्हें स्थानीय इतिहास, संस्कृति, जाति, वर्ग और औपनिवेशिक संदर्भों के साथ विश्लेषित करना आवश्यक है। यद्यपि रमाबाई ने इन शब्दों का प्रयोग नहीं किया, तथापि उनके लेखन में स्त्री, जाति, धर्म और औपनिवेशिक सत्ता के अंतर्संबंधों का जो विश्लेषण मिलता है, वह इन आधुनिक सिद्धांतों का ऐतिहासिक पूर्वगामी प्रतीत होता है। यही कारण है कि आज उनका चिंतन उत्तर–औपनिवेशिक और वैश्विक नारीवादी अध्ययन में विशेष महत्व रखता है (Spivak, 1988; Forbes, 1996)। रमाबाई का वैचारिक योगदान पश्चिमी नारीवाद के साथ संवाद स्थापित करता है, किंतु उसका अनुकरण नहीं करता। जहाँ मैरी वॉल्स्टनक्राफ्ट (1792) ने शिक्षा को स्त्री–स्वतंत्रता का आधार माना और एलिजाबेथ कैडी स्टैंटन तथा सुसान बी. एंथनी ने राजनीतिक अधिकारों और मताधिकार के लिए संघर्ष किया, वहीं रमाबाई ने शिक्षा को सामाजिक पुनर्निर्माण, जातिगत असमानता के उन्मूलन तथा धार्मिक रूढ़ियों से मुक्ति का माध्यम माना। उनका नारीवादी दृष्टिकोण भारतीय समाज की विशिष्ट सामाजिक–सांस्कृतिक परिस्थितियों से निर्मित था,जिसने वैश्विक नारीवादी बहसों को एक वैकल्पिक और बहुकेंद्रीय (polycentric) दृष्टि प्रदान की (Kosambi, 1998; O'Hanlon, 1985)।

यद्यपि पंडिता रमाबाई पर अनेक अध्ययन उपलब्ध हैं, फिर भी अधिकांश शोध उन्हें सामाजिक सुधारक या महिला शिक्षा की प्रवर्तक के रूप में सीमित करते हैं। उनके विचारों का संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोप और वैश्विक दक्षिण के समकालीन नारीवादी विमर्शों के साथ तुलनात्मक विश्लेषण अपेक्षाकृत कम हुआ है। प्रस्तुत शोध यह स्पष्ट करने का प्रयास करता है कि पंडिता रमाबाई का नारीवादी चिंतन भारतीय संदर्भों में विकसित होने के बावजूद वैश्विक नारीवादी इतिहास का एक महत्वपूर्ण और स्वतंत्र वैचारिक प्रतिमान है। इस प्रकार यह अध्ययन न केवल भारतीय नारीवादी परंपरा की पुनर्व्याख्या करता है, बल्कि वैश्विक नारीवादी इतिहास की बहुल और अंतर्सांस्कृतिक प्रकृति को भी रेखांकित करता है।

शोध उद्देश्य

- पंडिता रमाबाई के नारीवादी चिंतन के वैचारिक आधारों का विश्लेषण करना तथा यह स्पष्ट करना कि उनका चिंतन उन्नीसवीं शताब्दी के भारतीय सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं औपनिवेशिक संदर्भों में किस प्रकार विकसित हुआ।

- अमेरिकी, यूरोपीय एवं ग्लोबल साउथ की नारीवादी परंपराओं तथा भारतीय समकालीन महिला चिंतकों के साथ पंडिता रमाबाई के नारीवादी विमर्श का तुलनात्मक अध्ययन करना, ताकि उनके वैश्विक बौद्धिक योगदान एवं वैचारिक विशिष्टता का मूल्यांकन किया जा सके।
- पंडिता रमाबाई के लेखन में जाति, लिंग, धर्म एवं औपनिवेशिक सत्ता के अंतर्संबंधों का विश्लेषण करना तथा उनके चिंतन को अंतर्वर्गीय (Intersectional), उत्तर–औपनिवेशिक (Postcolonial) एवं ट्रांसनेशनल (Transnational) नारीवादी सिद्धांतों के परिप्रेक्ष्य में समझना।
- समकालीन वैश्विक नारीवादी विमर्श, सामाजिक न्याय तथा लैंगिक समानता के संदर्भ में पंडिता रमाबाई के विचारों की प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना तथा वैश्विक नारीवादी इतिहास में उनके योगदान की पुनर्व्याख्या प्रस्तुत करना।

शोध प्रश्न

- पंडिता रमाबाई के नारीवादी चिंतन के प्रमुख वैचारिक आधार क्या हैं, तथा वे उन्नीसवीं शताब्दी के भारतीय सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों से किस प्रकार निर्मित हुए?
- अमेरिकी, यूरोपीय एवं ग्लोबल साउथ की नारीवादी परंपराओं तथा भारतीय समकालीन महिला चिंतकों के साथ पंडिता रमाबाई के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन उनके वैश्विक बौद्धिक योगदान को किस प्रकार स्पष्ट करता है?
- पंडिता रमाबाई के लेखन में जाति, लिंग, धर्म और औपनिवेशिक सत्ता के अंतर्संबंध किस प्रकार अभिव्यक्त होते हैं, और वे आधुनिक अंतर्वर्गीय तथा ट्रांसनेशनल नारीवादी सिद्धांतों की पूर्वपीठिका के रूप में किस सीमा तक देखे जा सकते हैं?
- समकालीन वैश्विक नारीवादी विमर्श और भारतीय सामाजिक न्याय की बहसों के संदर्भ में पंडिता रमाबाई के विचारों की प्रासंगिकता क्या है?

शोध पद्धति

प्रस्तुत शोध गुणात्मक एवं वर्णनात्मक–विश्लेषणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। अध्ययन में तुलनात्मक तथा व्याख्यात्मक दृष्टिकोण का उपयोग करते हुए पंडिता रमाबाई के नारीवादी चिंतन का अमेरिकी, यूरोपीय एवं ग्लोबल साउथ की नारीवादी परंपराओं के संदर्भ में विश्लेषण

किया गया है। शोध के लिए मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है, जिनमें पंडिता रमाबाई की मूल कृतियाँ, समकालीन नारीवादी सिद्धांतकारों के ग्रंथ, सहकर्मी–समीक्षित (peer-reviewed) शोध लेख, पुस्तकें तथा विश्वसनीय अकादमिक डेटाबेस से प्राप्त साहित्य सम्मिलित हैं। अध्ययन का सैद्धांतिक विश्लेषण अंतर्विभाजक, उत्तर–औपनिवेशिक तथा परा–राष्ट्रीय नारीवादी दृष्टिकोणों के आधार पर किया गया है। इस पद्धति के माध्यम से पंडिता रमाबाई के विचारों की वैचारिक विशिष्टता, समकालीन प्रासंगिकता तथा वैश्विक नारीवादी विमर्श में उनके योगदान का समालोचनात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है।

2. साहित्य समीक्षा

पंडिता रमाबाई पर उपलब्ध साहित्य मुख्यतः तीन प्रमुख धाराओं में विभाजित किया जा सकता है—(i) जीवनी एवं ऐतिहासिक अध्ययन, (ii) भारतीय नारीवादी इतिहास और सामाजिक सुधार आंदोलन, तथा (iii) समकालीन उत्तर–औपनिवेशिक एवं ट्रांसनेशनल नारीवादी विश्लेषण। इन अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि रमाबाई का योगदान केवल महिला शिक्षा और सामाजिक सुधार तक सीमित नहीं था, बल्कि उन्होंने जाति, धर्म, पितृसत्ता और औपनिवेशिक सत्ता के अंतर्संबंधों को समझने का एक वैकल्पिक बौद्धिक ढाँचा प्रस्तुत किया।

रमाबाई की मूल कृति The High-Caste Hindu Woman (1887) भारतीय समाज में उच्चवर्णीय महिलाओं की स्थिति का प्रथम–हस्त विवरण प्रस्तुत करती है। यह ग्रंथ बाल–विवाह, विधवा–जीवन और स्त्री–शिक्षा के प्रश्नों का केवल वर्णन नहीं करता, बल्कि रूढ़िवादी सामाजिक संरचना और धार्मिक वैधता के माध्यम से निर्मित लैंगिक असमानताओं की आलोचनात्मक समीक्षा भी करता है। इसी प्रकार, The Peoples of the United States (1889) पश्चिमी समाज के प्रति रमाबाई के तुलनात्मक दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करती है, जिससे स्पष्ट होता है कि उन्होंने पश्चिमी नारीवाद को आदर्श मानने के बजाय भारतीय परिस्थितियों के अनुरूप उसकी आलोचनात्मक व्याख्या की। द्वितीयक साहित्य में ओ'हैनलॉन (1985) ने रमाबाई को औपनिवेशिक भारत में उभरती महिला चेतना की अग्रणी आवाज के रूप में देखा है, जबकि फोर्ब्स (1998) ने उन्हें भारतीय महिला आंदोलन के विकास में केंद्रीय स्थान प्रदान किया है। कोसांबी (1998) ने रमाबाई के निजी लेखन, यात्राओं और संस्थागत कार्यों का विश्लेषण करते हुए यह प्रतिपादित किया कि उनका नारीवादी दृष्टिकोण स्थानीय अनुभवों और वैश्विक बौद्धिक संपर्कों

के बीच निरंतर संवाद का परिणाम था। दूसरी ओर, चक्रवर्ती (1993) तथा सांगरी और वैद (1989) ने जाति और पितृसत्ता के अंतर्संबंधों की व्याख्या करके उस सामाजिक संरचना को स्पष्ट किया है जिसकी आलोचना रमाबाई अपने लेखन में करती हैं। वैश्विक नारीवादी सिद्धांतों में मोहंती (1988, 2003), स्पिवाक (1988) तथा क्रेंशॉ (1989) ने यह स्थापित किया कि महिलाओं के अनुभवों को किसी सार्वभौमिक पश्चिमी प्रतिमान के माध्यम से नहीं समझा जा सकता। उनके अनुसार, लिंग, जाति, वर्ग, धर्म और औपनिवेशिक इतिहास परस्पर अंतर्संबद्ध श्रेणियाँ हैं। यद्यपि इन सिद्धांतों का विकास बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ, किंतु रमाबाई के लेखन में इन अवधारणाओं की वैचारिक पूर्वपीठिका स्पष्ट दिखाई देती है।

उपलब्ध साहित्य से यह भी स्पष्ट होता है कि अधिकांश अध्ययन पंडिता रमाबाई को सामाजिक सुधारक, शिक्षाविद् अथवा धार्मिक चिंतक के रूप में विश्लेषित करते हैं। उनके विचारों का संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोप और वैश्विक दक्षिण के समकालीन नारीवादी विमर्शों के साथ तुलनात्मक अध्ययन अपेक्षाकृत सीमित है। विशेषतः ट्रांसनेशनल फेमिनिज्म, इंटरसेक्शनैलिटी और उत्तर–औपनिवेशिक नारीवादी सिद्धांतों के आलोक में उनके योगदान का व्यवस्थित पुनर्मूल्यांकन अभी भी अपेक्षित है। प्रस्तुत शोध इसी शोध–अंतर को संबोधित करते हुए पंडिता रमाबाई को वैश्विक नारीवादी चिंतन की बहुकेंद्रीय परंपरा में स्थापित करने का प्रयास करता है।

3- पंडिता रमाबाई का नारीवादी विमर्श

पंडिता रमाबाई का नारीवादी विमर्श उन्नीसवीं शताब्दी के भारतीय सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों में विकसित होने के बावजूद अपने स्वरूप में गहन रूप से वैश्विक तथा अंतर्सांस्कृतिक था। उनका चिंतन न केवल भारतीय पितृसत्तात्मक व्यवस्था की आलोचना करता है, बल्कि यह भी स्पष्ट करता है कि महिलाओं की अधीनता को केवल लैंगिक असमानता के आधार पर नहीं समझा जा सकता। उनके अनुसार जाति, धर्म, शिक्षा, सामाजिक परंपराएँ और औपनिवेशिक सत्ता मिलकर महिलाओं के जीवन–अनुभवों को निर्धारित करती हैं (Ramabai, 1887). इस प्रकार रमाबाई का वैचारिक प्रतिपादन आधुनिक अंतर्वर्गीय और उत्तर–औपनिवेशिक नारीवादी सिद्धांतों का एक प्रारंभिक रूप प्रस्तुत करता है (Crenshaw, 1989; Mohanty, 2003)। रमाबाई की वैचारिक विशिष्टता इस तथ्य में निहित है कि उन्होंने पश्चिमी उदारवादी नारीवाद का न तो अंधानुकरण किया और न ही भारतीय परंपरा का अनालोचित समर्थन।

इंग्लैंड और संयुक्त राज्य अमेरिका की यात्राओं के दौरान उन्होंने महिला शिक्षा, नागरिक अधिकारों तथा सामाजिक संगठनों का गंभीर अध्ययन किया, किंतु भारतीय महिलाओं की समस्याओं का समाधान भारतीय समाज की ऐतिहासिक और सांस्कृतिक वास्तविकताओं के अनुरूप खोजने का प्रयास किया (Kosambi, 2000)। परिणामस्वरूप उनका नारीवादी दृष्टिकोण स्थानीय अनुभवों और वैश्विक बौद्धिक संवाद के मध्य एक सृजनात्मक सेतु के रूप में विकसित हुआ।

पंडिता रमाबाई के नारीवादी चिंतन का तुलनात्मक विश्लेषण तीन व्यापक वैचारिक परिप्रेक्ष्यों में किया गया है। प्रथम, अमेरिकी नारीवादी परंपरा के अंतर्गत एलिजाबेथ कैडी स्टैंटन, सुसान बी. एंथनी तथा सोजर्नर ट्रुथ के विचारों के साथ रमाबाई के विमर्श की समानताओं और भिन्नताओं का परीक्षण किया जाएगा। द्वितीय, यूरोपीय नारीवादी चिंतन में मैरी वॉल्स्टनक्राफ्ट, एमेलीन पैंकहर्स्ट तथा सिमोन द बोउवार के सैद्धांतिक प्रतिपादनों के आलोक में रमाबाई की वैचारिक स्थिति का विश्लेषण किया जाएगा। तृतीय, ग्लोबल साउथ के संदर्भ में चीन की च्यू जिन, मिस्र की हुडा शा'रावी तथा नाइजीरिया की फुनमिलायो रैनसम–कुटी के साथ तुलनात्मक अध्ययन के माध्यम से यह स्पष्ट किया जाएगा कि विभिन्न उपनिवेशित समाजों में विकसित नारीवादी विचारधाराओं ने स्थानीय सामाजिक संरचनाओं के भीतर रहते हुए भी महिलाओं की मुक्ति के लिए समानांतर वैचारिक प्रतिमानों का निर्माण किया। इस प्रकार यह पंडिता रमाबाई को केवल भारतीय समाज सुधारक के रूप में नहीं, बल्कि वैश्विक नारीवादी इतिहास की बहुकेंद्रीय परंपरा की एक महत्वपूर्ण चिंतक के रूप में स्थापित करने का प्रयास करता है (Forbes, 1998; Grewal & Kaplan, 1994).

3-1 अमेरिकी नारीवाद एवं पंडिता रमाबाई

उन्नीसवीं शताब्दी का अमेरिकी नारीवादी आंदोलन मुख्यतः महिलाओं के मताधिकार, शिक्षा, संपत्ति के अधिकार तथा नागरिक समानता की मांग पर केंद्रित था। एलिजाबेथ कैडी स्टैंटन और सुसान बी. एंथनी ने महिलाओं के राजनीतिक अधिकारों को लोकतांत्रिक समाज की अनिवार्य शर्त माना तथा Declaration of Sentiments (1848) के माध्यम से लैंगिक समानता को संवैधानिक अधिकारों के प्रश्न से जोड़ा (Stanton et al., 1881)। दूसरी ओर, सोजर्नर ट्रुथ ने अपने प्रसिद्ध भाषण "Ain't I a Woman?" के माध्यम से यह प्रतिपादित किया कि नस्ल और लिंग का संयुक्त उत्पीड़न अश्वेत महिलाओं के अनुभवों को श्वेत महिलाओं से भिन्न बनाता है (Truth, 1851)। इस प्रकार अमेरिकी नारीवाद के भीतर समानता के

साथ–साथ सामाजिक बहिष्करण के विविध आयामों की पहचान भी विकसित होने लगी।

पंडिता रमाबाई का नारीवादी दृ ष्टिकोण इन विचारकों से अनेक स्तरों पर संवाद स्थापित करता है, किंतु उसका सामाजिक आधार भिन्न था। रमाबाई ने महिलाओं की शिक्षा और आत्मनिर्भरता को सामाजिक परिवर्तन का प्रमुख साधन माना, किंतु उनका विश्लेषण भारतीय समाज की जाति–व्यवस्था, धार्मिक रूढ़िवाद और पितृसत्तात्मक संस्थाओं की आलोचना से गहराई से जुड़ा था (Ramabai, 1887)। जहाँ स्टैंटन और एंथनी का संघर्ष मुख्यतः राजनीतिक नागरिकता और मताधिकार पर केंद्रित था, वहीं रमाबाई के लिए शिक्षा, विधवा पुनर्वास, बाल–विवाह का उन्मूलन तथा सामाजिक गरिमा महिलाओं की मुक्ति के मूल आधार थे (Kosambi, 2000)। इसी प्रकार, जिस प्रकार सोजर्नर ट्रुथ ने नस्ल और लिंग के अंतर्संबंधों को रेखांकित किया, उसी प्रकार रमाबाई ने भारतीय संदर्भ में जाति, धर्म और लिंग की परस्पर निर्भर संरचनाओं का विश्लेषण किया, जो आधुनिक अंतर्विभाजक नारीवाद की पूर्वपीठिका के रूप में देखा जा सकता है (Crensh, 1989)। अतः अमेरिकी नारीवाद और रमाबाई के विचारों में समानता का आधार महिलाओं की गरिमा और समानता है, जबकि उनकी वैचारिक विशिष्टता उनके–अपने सामाजिक एवं ऐतिहासिक संदर्भों से निर्मित होती है।

3.2 यूरोपीय नारीवाद एवं पंडिता रमाबाई

यूरोपीय नारीवाद ने आधुनिक स्त्री–अधिकार विमर्श की वैचारिक आधारशिला निर्मित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। मैरी वॉल्स्टनक्राफ्ट ने अपनी प्रसिद्ध कृति “A Vindication of the Rights of Woman” (1792) में तर्क दिया कि महिलाओं की हीन सामाजिक स्थिति का प्रमुख कारण शिक्षा से उनका वंचित रहना है। उनके अनुसार, स्त्री और पुरुष की बौद्धिक क्षमता में कोई स्वाभाविक अंतर नहीं हैय अतः समान शिक्षा सामाजिक समानता की पूर्वशर्त है (Wollstonecraft, 1792)। इसके विपरीत, एमेलीन पैंकहर्स्ट के नेतृत्व में ब्रिटिश मताधिकार आंदोलन ने महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी और नागरिक अधिकारों को लोकतांत्रिक व्यवस्था के केंद्र में स्थापित किया (Pankhurst, 1914)। बाद में सिमोन द बोउवार ने “The Second Sex” (1949) में यह प्रतिपादित किया कि स्त्री जन्म से नहीं, बल्कि सामाजिक प्रक्रियाओं के माध्यम से ”स्त्री” बनाई जाती है (de Beauvoir, 1949)।

पंडिता रमाबाई का नारीवादी चिंतन इन यूरोपीय विचारकों के साथ महत्वपूर्ण वैचारिक संवाद स्थापित करता है।

वॉल्स्टनक्राफ्ट की भाँति उन्होंने भी महिला शिक्षा को मुक्ति का आधार माना, किंतु इसे भारतीय समाज में जातिगत भेदभाव, धार्मिक रूढ़ियों और विधवा–उत्पीड़न से जोड़कर देखा (Ramabai, 1887)। इसी प्रकार, जहाँ पैंकहर्स्ट का संघर्ष राजनीतिक अधिकारों पर केंद्रित था, वहीं रमाबाई ने सामाजिक पुनर्गठन और नैतिक समानता को प्राथमिकता दी। बोउवार की सामाजिक निर्मिति (social construction) की अवधारणा के आलोक में देखा जाए तो रमाबाई का विश्लेषण यह दर्शाता है कि भारतीय समाज में स्त्री की पहचान पितृसत्ता, जाति और धार्मिक परंपराओं के संयुक्त प्रभाव से निर्मित होती है। इस प्रकार रमाबाई का विमर्श यूरोपीय उदारवादी नारीवाद का विस्तार न होकर भारतीय सामाजिक यथार्थ पर आधारित एक स्वतंत्र और बहुआयामी नारीवादी प्रतिमान प्रस्तुत करता है.

3.3 ग्लोबल साउथ व भारतीय नारीवादी परंपराएँ एवं पंडिता रमाबाई

पंडिता रमाबाई का नारीवादी चिंतन केवल भारतीय सामाजिक सुधार आंदोलन तक सीमित नहीं था, बल्कि वह ग्लोबल साउथ में विकसित उन वैचारिक धाराओं का भी प्रतिनिधित्व करता है, जिन्होंने औपनिवेशिक शासन, पितृसत्ता और सामाजिक पदानुक्रम के विरुद्ध महिलाओं की स्वतंत्रता का प्रश्न उठाया। चीन की च्यू जिन ने राष्ट्रवाद, महिला शिक्षा और सामंती परंपराओं के विरोध को महिलाओं की मुक्ति से जोड़ा (Edwards, 2010)। इसी प्रकार मिस्र की हुडा शा–रावी ने पर्दा–प्रथा, महिला शिक्षा और सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की भागीदारी का समर्थन करते हुए अरब नारीवाद को आधुनिक स्वर प्रदान किया (Badran, 1995)। नाइजीरिया की फुनमिलायो रैनसम–कुटी ने औपनिवेशिक शासन, कराधान और लैंगिक भेदभाव के विरुद्ध महिलाओं के सामूहिक राजनीतिक संगठन को सशक्त बनाया (Johnson-Odim, 1997)। इन सभी विचारकों की भाँति रमाबाई ने भी सामाजिक न्याय को केवल लैंगिक समानता तक सीमित न रखकर व्यापक सामाजिक परिवर्तन से जोड़ा।

भारतीय संदर्भ में रमाबाई का चिंतन ताराबाई शिंदे, सावित्रीबाई फुले, बेगम रुकैया तथा कॉर्नेलिया सोराबजी जैसे समकालीन सुधारकों के साथ एक व्यापक वैचारिक संवाद स्थापित करता है। ताराबाई शिंदे की स्त्री–पुरुष तुलना (1882) ने ब्राह्मणवादी पितृसत्ता की तीखी आलोचना की, जबकि सावित्रीबाई फुले ने महिला एवं दलित शिक्षा को सामाजिक समानता का आधार बनाया (Rege, 2013)। बंगाल की बेगम रुकैया ने मुस्लिम महिलाओं की शिक्षा और बौद्धिक स्वतंत्रता का समर्थन करते हुए धार्मिक

रूढ़ियों को चुनौती दी (Rokeya, 1905)। वहीं कॉर्नेलिया सोराबजी ने विधिक सुधारों और महिलाओं के संपत्ति अधिकारों के प्रश्न को औपनिवेशिक न्याय व्यवस्था के भीतर उठाया (Burton, 1998)। यद्यपि इन सभी चिंतकों के सामाजिक एवं धार्मिक संदर्भ भिन्न थे, फिर भी उनका साझा उद्देश्य महिलाओं की गरिमा, शिक्षा और सामाजिक न्याय की स्थापना था।

उल्लेखनीय है कि पंडिता रमाबाई का नारीवादी दृष्टिकोण औपनिवेशिक शासन द्वारा प्रतिपादित तथाकथित ''सभ्यतामूलक मिशन'' (Civilizing mission) तथा पश्चिमी साम्राज्यवादी नारीवाद से भी स्पष्ट रूप से भिन्न था। यद्यपि उन्होंने पश्चिमी शिक्षा, महिला संगठनों और सामाजिक कल्याण की कुछ संस्थागत विशेषताओं की सराहना की, किन्तु उन्होंने भारतीय महिलाओं की समस्याओं का समाधान पश्चिमी मूल्यों के आरोपण में नहीं, बल्कि भारतीय समाज की जातिगत, धार्मिक और सांस्कृतिक संरचनाओं के आलोचनात्मक पुनर्गठन में देखा (Ramabai, 1887). इस दृष्टि से रमाबाई न तो औपनिवेशिक सत्ता की समर्थक थीं और न ही सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की अंध–समर्थक बल्कि उन्होंने दोनों के मध्य एक आलोचनात्मक वैचारिक स्थिति (Critical middle position) विकसित की। यही कारण है कि समकालीन ट्रांसनेशनल फेमिनिस्ट विद्वान उनके विचारों को वैश्विक दक्षिण के उन प्रारंभिक बौद्धिक हस्तक्षेपों में सम्मिलित करते हैं, जिन्होंने स्थानीय अनुभवों को वैश्विक नारीवादी विमर्श के साथ जोड़ते हुए महिलाओं की एजेंसी, आत्मनिर्णय और सामाजिक न्याय को केंद्र में स्थापित किया (Mohanty, 2003; Grewal & Kaplan, 1994). इस प्रकार पंडिता रमाबाई का नारीवादी विमर्श भारतीय सामाजिक यथार्थ में निहित होने के बावजूद एक बहुकेंद्रीय, अंतर्सांस्कृतिक और वैश्विक नारीवादी प्रतिमान के रूप में उभरता है। इन तुलनात्मक उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि पंडिता रमाबाई का नारीवादी दृष्टिकोण किसी एक राष्ट्र या सांस्कृतिक परंपरा तक सीमित नहीं था। उन्होंने भारतीय समाज की जाति–आधारित पितृसत्ता की आलोचना करते हुए महिलाओं की मुक्ति को शिक्षा, सामाजिक पुनर्निर्माण और नैतिक समानता से जोड़ा। इस प्रकार उनका चिंतन ट्रांसनेशनल फेमिनिज्म की उस बहुकेंद्रीय परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें स्थानीय अनुभव और वैश्विक वैचारिक आदान–प्रदान परस्पर पूरक बनकर उभरते हैं (Mohanty, 2003; Kosambi, 2000)।

4. पंडिता रमाबाई के अंतर्विभाजक दृष्टिकोण की समकालीन प्रासंगिकता

समकालीन नारीवादी सिद्धांत में अंतर्विभाजकता एक केंद्रीय विश्लेषणात्मक

अवधारणा है, जिसे किम्बर्ले क्रेंशॉ (Kimberlé Crenshaw, 1989) ने यह स्पष्ट करने के लिए विकसित किया कि महिलाओं के उत्पीड़न को केवल लिंग के आधार पर नहीं समझा जा सकताय जाति, वर्ग, नस्ल, धर्म तथा अन्य सामाजिक पहचानों के अंतर्संबंध भी उनके अनुभवों को निर्धारित करते हैं। यद्यपि यह अवधारणा बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में औपचारिक रूप से प्रतिपादित हुई, पंडिता रमाबाई के लेखन में इसके मूल तत्व उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ही स्पष्ट दिखाई देते हैं। “The High-Caste Hindu Woman” (1887) में उन्होंने दर्शाया कि भारतीय महिलाओं की अधीनता केवल पितृसत्ता का परिणाम नहीं है, बल्कि जातिगत पदानुक्रम, धार्मिक रूढ़ियों, शिक्षा से वंचितकरण और सामाजिक परंपराओं की संयुक्त संरचना से निर्मित होती है (Ramabai, 1887)।

रमाबाई का विश्लेषण भारतीय नारीवाद को पश्चिमी उदारवादी प्रतिमानों से अलग एक विशिष्ट वैचारिक आधार प्रदान करता है। जहाँ पश्चिमी प्रथम चरण का नारीवाद मुख्यतः नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर केंद्रित था, वहीं रमाबाई ने सामाजिक न्याय, शिक्षा, आर्थिक आत्मनिर्भरता और मानवीय गरिमा को महिलाओं की वास्तविक मुक्ति की आधारशिला माना। उनका दृष्टिकोण उमा चक्रवर्ती (1993) द्वारा प्रतिपादित 'ब्राह्मणवादी पितृसत्ता' की अवधारणा तथा चंद्रा तलपड़े मोहंती (2003) के 'ट्रांसनेशनल फेमिनिज़्म' के साथ उल्लेखनीय वैचारिक साम्य प्रस्तुत करता है। इसी प्रकार, बेल हुक्स (1984) द्वारा वर्ग, नस्ल और लिंग के अंतर्संबंधों पर दिया गया बल भारतीय संदर्भ में रमाबाई के जाति, धर्म और लिंग आधारित विश्लेषण की प्रासंगिकता को और अधिक सुदृढ़ करता है। आज के भारत में लैंगिक न्याय, जातिगत असमानता, धार्मिक पहचान, शिक्षा और सामाजिक समावेशन से जुड़े प्रश्नों के संदर्भ में पंडिता रमाबाई का चिंतन अत्यंत प्रासंगिक है। उनका नारीवादी विमर्श यह प्रतिपादित करता है कि महिलाओं की समानता केवल विधिक अधिकारों से सुनिश्चित नहीं हो सकती, बल्कि इसके लिए सामाजिक संरचनाओं, सांस्कृतिक मान्यताओं और संस्थागत असमानताओं का आलोचनात्मक पुनर्गठन आवश्यक है। इस दृ ष्टि से पंडिता रमाबाई को भारतीय नारीवाद की अग्रदूत मात्र नहीं, बल्कि अंतर्वर्गीय एवं ट्रांसनेशनल नारीवादी चिंतन की एक प्रारंभिक सिद्धांतकार के रूप में भी पुनर्परिभाषित किया जा सकता है।

5. तुलनात्मक विश्लेषण

पंडिता रमाबाई का नारीवादी चिंतन वैश्विक नारीवादी परंपराओं के साथ अनेक

स्तरों पर संवाद स्थापित करता है, किंतु उसकी विशिष्टता भारतीय समाज की जाति–आधारित सामाजिक संरचना, धार्मिक रूढ़िवाद और औपनिवेशिक परिस्थितियों के विश्लेषण में निहित है। अमेरिकी और यूरोपीय नारीवादी आंदोलनों ने मुख्यतः राजनीतिक अधिकारों, मताधिकार, शिक्षा और नागरिक समानता पर बल दिया, जबकि रमाबाई ने महिलाओं की मुक्ति को सामाजिक पुनर्गठन, शिक्षा, विधवा–उत्थान, जातिगत असमानता के उन्मूलन तथा धार्मिक पुनर्व्याख्या से जोड़ा (तालिका 1)। इसी प्रकार, ग्लोबल साउथ की अन्य महिला चिंतकों की भाँति उन्होंने भी स्थानीय सामाजिक संदर्भों को केंद्र में रखते हुए महिलाओं के अधिकारों की वकालत की। इसलिए रमाबाई का नारीवाद न तो पश्चिमी उदारवादी नारीवाद का प्रतिरूप था और न ही केवल भारतीय सामाजिक सुधार आंदोलन का विस्तारय बल्कि यह एक बहुआयामी, अंतर्वर्गीय और ट्रांसनेशनल वैचारिक परियोजना थी (Mohanty, 2003; Kosambi, 2000)।

तालिका 1

पंडिता रमाबाई और वैश्विक नारीवादी चिंतकों का तुलनात्मक विश्लेषण

विचारक	देश	प्रमुख मुद्दे	नारीवादी दृष्टिकोण	पंडिता रमाबाई से समानता	प्रमुख भिन्नता
एलिजाबेथ कैडी स्टैंटन	अमेरिका	मताधिकार, नागरिक समानता	उदारवादी नारीवाद	महिलाओं के अधिकार और शिक्षा पर बल	जाति और धार्मिक संरचनाओं का सीमित विश्लेषण
मैरी वॉल्स्टनक्राफ्ट	इंग्लैंड	शिक्षा और बौद्धिक समानता	उदारवादी नारीवाद	महिला शिक्षा को मुक्ति का साधन मानना	जाति एवं औपनिवेशिक संदर्भ अनुपस्थित
सिमोन द बोउवार	फ्रांस	लैंगिक पहचान की सामाजिक निर्मिति	अस्तित्ववादी नारीवाद	स्त्री–अधीनता की संरचनात्मक व्याख्या	रमाबाई धार्मिक और जातिगत आयामों को अधिक महत्व देती हैं
च्यू जिन	चीन	महिला शिक्षा, राष्ट्रवाद	राष्ट्रवादी नारीवाद	शिक्षा और सामाजिक सुधार पर बल	चीनी राष्ट्रवाद का प्रभाव अधिक
हुडा शा–रावी	मिस्र	पर्दा–प्रथा, महिला शिक्षा	अरब नारीवाद	धार्मिक रूढ़ियों की आलोचना	इस्लामी सामाजिक संरचनाओं पर केंद्रित
फुनमिलायो रैनसम–कुटी	नाइजीरिया	औपनिवेशिक शोषण, महिला संगठन	अफ्रीकी नारीवाद	सामाजिक न्याय और महिला सशक्तीकरण	औपनिवेशिक कर–नीतियों और राजनीतिक संगठन पर अधिक बल
ताराबाई शिंदे	भारत (महाराष्ट्र)	पितृसत्ता और लैंगिक भेदभाव	प्रारंभिक भारतीय नारीवाद	ब्राह्मणवादी पितृसत्ता की आलोचना	रमाबाई की तुलना में संस्थागत सामाजिक कार्य कम
सावित्रीबाई	भारत	महिला एवं	सामाजिक	शिक्षा और	फुले परंपरा में जाति

फुले	(महाराष्ट्र)	दलित शिक्षा	न्याय आधारित नारीवाद	सामाजिक समानता पर बल	प्रश्न अधिक प्रत्यक्ष
बेगम रुकैया	बंगाल	मुस्लिम महिला शिक्षा	मुस्लिम नारीवाद	शिक्षा और महिला स्वतंत्रता का समर्थन	मुस्लिम समाज की विशिष्ट समस्याओं पर केंद्रित

तालिका से स्पष्ट है कि पंडिता रमाबाई का चिंतन विभिन्न नारीवादी परंपराओं के साथ वैचारिक समानताएँ साझा करता है, किंतु उनकी सबसे बड़ी विशिष्टता यह है कि उन्होंने लिंग, जाति, धर्म और औपनिवेशिक सत्ता के अंतर्संबंधों को एक साथ समझने का प्रयास किया। यही कारण है कि उनका नारीवादी विमर्श आज के अंतर्वर्गीय और परा–राष्ट्रीय नारीवादी सिद्धांतों के लिए अत्यंत प्रासंगिक माना जाता है (Crenshaw, 1989; Mohanty, 2003)। रमाबाई का योगदान यह दर्शाता है कि वैश्विक नारीवादी इतिहास एकरेखीय न होकर बहुकेंद्रीय है, जिसमें विभिन्न समाजों की महिलाएँ अपने–अपने ऐतिहासिक संदर्भों में स्वतंत्र रूप से नारीवादी विचारधाराओं का विकास करती रही हैं।

6- निष्कर्ष

पंडिता रमाबाई का नारीवादी चिंतन भारतीय सामाजिक इतिहास और वैश्विक नारीवादी परंपराओं के मध्य एक महत्वपूर्ण वैचारिक सेतु का कार्य करता है। प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि यद्यपि उनके विचार उन्नीसवीं शताब्दी के औपनिवेशिक भारत की सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों में विकसित हुए, तथापि उनका बौद्धिक योगदान राष्ट्रीय सीमाओं से परे जाकर वैश्विक नारीवादी विमर्श में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। अमेरिकी नारीवाद के नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों, यूरोपीय नारीवाद के शिक्षा और समानता संबंधी सिद्धांतों तथा ग्लोबल साउथ के सामाजिक न्याय–आधारित आंदोलनों के साथ उनकी वैचारिक समानताएँ स्पष्ट हैं, किंतु उनकी विशिष्टता जाति, धर्म, पितृसत्ता और औपनिवेशिक सत्ता के अंतर्संबंधों के समग्र विश्लेषण में निहित है। यह अध्ययन यह भी प्रतिपादित करता है कि पंडिता रमाबाई का चिंतन आधुनिक अंतर्वर्गीय और ट्रांसनेशनल नारीवादी सिद्धांतों का एक प्रारंभिक बौद्धिक आधार प्रस्तुत करता है। उन्होंने महिला शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन, आत्मनिर्भरता और मानवीय गरिमा की स्थापना का साधन माना। उनके विचार आज भी लैंगिक न्याय, सामाजिक समावेशन, शिक्षा, जातिगत समानता और लोकतांत्रिक अधिकारों से जुड़े विमर्शों में समान रूप से प्रासंगिक हैं। अतः पंडिता रमाबाई को केवल भारतीय समाज

सुधारक के रूप में नहीं, बल्कि वैश्विक नारीवादी इतिहास की बहुकेंद्रीय परंपरा की अग्रणी चिंतक के रूप में पुनर्स्थापित किया जाना चाहिए। भविष्य के शोध में उनके विचारों की तुलना एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका की अन्य महिला चिंतकों के साथ करके वैश्विक दक्षिण के नारीवादी इतिहास को और अधिक समृद्ध किया जा सकता है।

संदर्भ सूची

Alexander, M. J., & Mohanty, C. T. (Eds.). (1997). *Feminist genealogies, colonial legacies, democratic futures*. Routledge.

Badran, M. (1995). *Feminists, Islam, and nation: Gender and the making of modern Egypt*. Princeton University Press.

Burton, A. (1998). *At the heart of the empire: Indians and the colonial encounter in late-Victorian Britain*. University of California Press.

Butler, J. (1990). *Gender trouble: Feminism and the subversion of identity*. Routledge.

Chakravarti, U. (1993). Conceptualising Brahmanical patriarchy in early India: Gender, caste, class and state. *Economic and Political Weekly, 28*(14), 579–585. https://www.jstor.org/stable/4399556

Chakravarti, U. (1998). *Rewriting history: The life and times of Pandita Ramabai*. Kali for Women.

Crenshaw, K. (1989). Demarginalizing the intersection of race and sex: A Black feminist critique of antidiscrimination doctrine, feminist theory and antiracist politics. *University of Chicago Legal Forum, 1989*(1), 139–167. https://chicagounbound.uchicago.edu/uclf/vol1989/iss1/8

de Beauvoir, S. (1949). *The second sex* (C. Borde & S. Malovany-Chevallier, 2011, [Trans.]). Vintage Books.

Edwards, L. (2010). *Women warriors and wartime spies of China*. Cambridge University Press.

Forbes, G. (1998). *Women in modern India*. Cambridge University Press.

Fraser, N. (2013). *Fortunes of feminism*. Verso.

Grewal, I., & Kaplan, C. (Eds.). (1994). *Scattered hegemonies: Postmodernity and transnational feminist practices*. University of Minnesota Press.

Johnson-Odim, C., & Mba, N. (1997). *For women and the nation: Funmilayo Ransome-Kuti of Nigeria*. University of Illinois Press.

Kosambi, M. (1998). Multiple contestations: Pandita Ramabai's educational and missionary activities in late nineteenth-century India and abroad. *Women's History Review, 7*(2), 197–216. https://doi.org/10.1080/09612029800200181

Kosambi, M. (2004). Tracing the voice: Pandita Ramabai's life through her landmark texts. *Australian Feminist Studies, 19*(43), 19–28. https://doi.org/10.1080/0816464042000197404

Kosambi, M. (Ed.). (2000). *Pandita Ramabai through her own words: Selected works*. Oxford University Press.

Mohanty, C. T. (1988). Under Western eyes: Feminist scholarship and colonial discourses. *Feminist Review, 30,* 61–88. https://doi.org/10.1057/fr.1988.42

Mohanty, C. T. (2003). *Feminism without borders: Decolonizing theory, practicing solidarity*. Duke University Press.

O'Hanlon, R. (1985). *A comparison between women and men: Tarabai Shinde and the critique of gender relations in colonial India*. Oxford University Press.

Pankhurst, E. (2015). *My own story*. CreateSpace Independent Publishing Platform. (Original work published in 1914)

Ramabai, P. (1887). *The High-Caste Hindu Woman*. J. B. Rodgers Printing Company. https://digital.library.upenn.edu/women/ramabai/woman/woman.html

Rege, S. (Ed.). (2013). *Against the madness of Manu: B. R. Ambedkar's writings on Brahmanical patriarchy*. Navayana.

Rokeya, B. S. (1905). *Sultana's dream and selected writings*. The Feminist Press.

Spivak, G. C. (1988). Can the subaltern speak? In C. Nelson & L. Grossberg (Eds.), *Marxism and the interpretation of culture* (pp. 271–313). University of Illinois Press.

Stanton, E. C., Anthony, S. B., & Gage, M. J. (1881). *History of woman suffrage* (Vol. 1). Fowler & Wells.

Truth, S. (1851). *Ain't I a woman?* In H. Aptheker (Ed.), *A documentary history of the Negro people in the United States*. The Citadel Press.

Wollstonecraft, M. (1792). *A vindication of the rights of woman*. Everyman's Library.